VPM CLASSES

NTA UGC NET

LAW

SAMPLE THEORY - *(Hindi Medium)*

- उद्देशिका
- मूल अधिकार एवं मूल कर्तव्य
- राज्य के नीति निदेशक तत्व
- न्याय पलिका

9001894070 www.vpmclasses.com

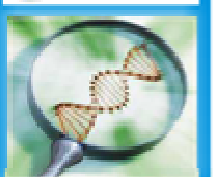

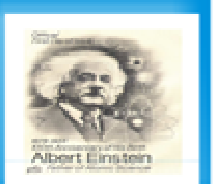

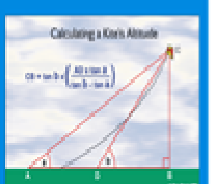

UGC NET - LAW

SAMPLE THEORY

- उद्देशिका
- मूल अधिकार एवं मूल कर्तव्य
- राज्य के नीति निदेशक तत्व
- न्याय पलिका

VPM CLASSES

For IIT-JAM, JNU, GATE, NET, NIMCET and Other Entrance Exams

Web Site www.vpmclasses.com E-mail-vpmclasses@yahoo.com

उद्देशिका

भारत के संविधान की उद्देशिका आस्ट्रेलिया के संविधान से प्रेरित है। गोलक नाथ बनाम पंजाब राज्य के मामले के अनुसार "प्रस्थावना संविधान के मुख्य आदर्शों एवं आकांक्षाओं का उल्लेख करती है।"

संविधान की उद्देशिका

प्रायः प्रत्येक अधिनियम के प्रारम्भ में एक उद्देशिका रहती है। उद्देशिका में उन उद्देश्यों का उल्लेख किया जाता है जिनकी प्राप्ति के लिए कोई अधिनियम पारित किया जाता है। न्यायाधिपति श्री सुब्बाराव के शब्दों में– "उद्देशिका किसी अधिनियम के मुख्य आदर्शों एवं आकांक्षाओं को उल्लेख करती है।" उद्देशिका अधिनियम के उद्देश्यों एवं नीतियों को समझने में सहायक होती है उच्चतम न्यायालय के अनुसार उद्देशिका संविधान निर्माताओं के विचारों को जानने की कुंजी है। संविधान की रचना के समय निर्माताओं का क्या उद्देश्य था या वे किन उच्चादर्शों की स्थापना भारतीय संविधान में करना चाहते थे, इन सबको जानने का माध्यम उद्देशिका ही होती है। हमारे संविधान की उद्देशिका इस प्रकार है –

हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न समाजवादी पंथ निरपेक्ष लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठता और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए, तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर, 1949 को एततद्वारा इस संविधान को अंगीकृत अधिनियम और आत्मार्पित करते है।

उद्देशिका का संविधान के निर्वचन में महत्व – बेरूबारी युनियन के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि उद्देशिका संविधान का अंग नहीं है। उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि उद्देशिका को संविधान का प्रेरणातत्व भले ही कहा जाये, किन्तु उसे संविधान का आवश्यक भाग नहीं कहा जा सकता है। इसके न रहने से संविधान के मूल उद्देश्यों में कोई अन्तर नहीं पड़ता है। यह न तो सरकार को शक्ति प्रदान करने का स्त्रोत है और न ही उस शक्ति को किसी भी भाँति निर्बन्धित, नियंत्रित या संकुचित करती है। उद्देशिका का महत्व केवल तब होता है जब संविधान की भाषा अस्पष्ट या संदिग्ध हो। ऐसी अवस्था में संविधान के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए उद्देशिका का सहारा लिया जा सकता है। जहां संविधान की भाषा असंदिग्ध है, उद्देशिका की सहायता लेना आवश्यक नहीं हैं।

किन्तु केशवनन्द भारती बनाम केरल राज्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने बेरूबारी के मामले में दिये गये निर्णय को उलट दिया और यह अभिनिर्धारित किया कि उद्देशिका संविधान का एक भाग है। किसी साधारण

अधिनियम में उद्देशिका को उतना महत्व नहीं दिया जाता है जितना संविधान में। संविधान के उपबन्धों के निर्वचन में उद्देशिका का बहुत बड़ा महत्व है।

उद्देशिका से लाभ – उद्देशिका निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति करती है –

1. संविधान को स्त्रोत क्या है, अर्थात् 'भारत के लोग'। 2. संविधान का उद्देश्य क्या है, अर्थात् इसमें उन महान् अधिकारों तथा स्वतन्त्रताओं की घोषणा की गई है जिन्हें भारत के लोगों ने सभी नागरिकों के लिए सुनिश्चित बनाने की इच्छा की थी। 3. इसमें संविधान के प्रवर्तन की तिथि का उल्लेख है।

इक्सेल वियर बनाम भारत संघ के मामले में उच्चतम न्यायालय ने उद्देशिका में जोड़े गये 'समाजवाद' शब्द के प्रभाव के विषय में अपना मत व्यक्त किया है। न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि 'समाजवाद' शब्द का प्रभाव यह है कि न्यायालय को राष्ट्रीकरण और राज्य स्वामित्व को अधिक प्रभाव देना चाहिये। किन्तु जब तक निजी कारखाने और सम्पति को मान्यता है और हमारे आर्थिक ढाँचे का बहुत बड़ा भाग इससे शासित होता है, समाजवाद और सामाजिक न्याय को इस सीमा तक लागू नहीं किया जा सकता और निजी स्वामित्व वाले वर्ग के हितों की उपेक्षा नहीं की जा सकती है।

उद्देशिका में संशोधन – क्या उद्देशिका में अनुच्छेद 368 के अधीन संशोधन किया जा सकता हैं? केशवानन्द भारती बनाम केरल राज्य के मामले में सरकार की ओर से यह तर्क दिया गया कि चूंकि उद्दशिका भी संविधान का एक भाग है; अतः अनुच्छेद 368 के अन्तर्गत उसमें भी संशोधन किया जा सकता है। अपीलार्थी की ओर से कहा गया कि अनुच्छेद 368 द्वारा प्रदत्त संशोधन की शक्ति सीमित है और उद्देशिका स्वयं संशोधन की शक्ति पर विवक्षित परिसीमा लगाती है। उद्देशिका में संशोधन का आधारभूत ढाँचा निहित है, जिसको संशोधन करके नष्ट नहीं किया जा सकता है क्योंकि यदि उनमें से कोई भी निकाल दिया जाय तो संविधानिक ढाँचे का गिर जाना निश्चित है।

मूल अधिकार एवं मूल कर्तव्य

डॉ. अम्बेडकर ने इस भाग को सर्वाधिक आलोचित भाग कहा है इसका मूल स्त्रोत प्रस्तावना है। मूल अधिकारों को सर्वप्रथम अमेरिका में पूर्ण संवैधानिक स्तर प्रदान किया गया।

भारतीय संविधान में मूल अधिकारों की कोई परिभाषा नहीं की गई है –

मेनका गांधी बनाम भारत संघ AIR S.C. 1978 के अनुसार –

"ये अधिकार इस देश की जनता द्वारा वैदिक काल से संजोए गए आधारभूत मूल्यों का प्रतिनिधित्व करता है। और वे व्यक्ति की गरिमा का संरक्षण करने और ऐसी दशाएँ बनाने के लिए परिकल्पित है। जिनमें हर एक मानव अपने अस्तित्व का पूर्ण विकास कर सके।"

VPM CLASSES

मूल अधिकार

भारतीय संविधान की एक प्रमुख विशेषता जनता के मूल अधिकारों की घोषणा हैं। संविधान के भाग 3 में इन अधिकारो का विशद् रूप से उल्लेख किया गया है। भारतीय संविधान में जितने विस्तृत और व्यापक रूप से इन अधिकारों का उल्लेख किया गया है उतना संसार के किसी भी लिखित संघात्मक संविधान में नहीं किया गया है। मूल अधिकारों से सम्बन्धित उपबन्धों का समावेश आधुनिक लोकतान्त्रिक विचारों की प्रवृति के अनुकूल ही है। सभी आधुनिक संविधानों में मूल अधिकारों का उल्लेख है। इसलिए संविधान के अध्याय 3 को भारत का अधिकार पत्र कहा जाता है। इस अधिकार पत्र द्वारा ही अंग्रेजों ने सन् 1215 में इंग्लैण्ड के सम्राट जॉन से नागरिकों के मूल अधिकारों की सुरक्षा प्राप्त की थी। यह अधिकार पत्र मूल अधिकारों से सम्बन्धित प्रथम लिखित दस्तावेज है। इस दस्तावेज को मूल अधिकारों का जन्मदाता कहा जाता है। इसके पश्चात् समय समय पर सम्राट ने अनेक अधिकारों की स्वीकृति प्रदान की। अन्त में 1689 में बिल ऑफ राइट्स नामक दस्तावेज लिखा गया जिसमें जनता को दिये गये सभी महत्वपूर्ण अधिकारों एवं स्वतन्त्रताओं को समाविष्ट किया गया। फ्रांस में सन् 1789 में जनता के मूल अधिकारों की एक पृथक् प्रलेख में घोषणा की गयी, जिसे मानव एवं नागरिकों के अधिकार घोषणा पत्र के नाम से जाना जाता है। इसमें उन अधिकारों को प्राकृतिक अप्रतिदेय ओर मनुष्य के पवित्र अधिकारों के रूप में उल्लिखित किया गया है; यह दस्तावेज एक लम्बे और कठिन संघर्ष का परिणाम था।

आच्छादन का सिद्धान्त

आच्छादन का सिद्धान्त अनुच्छेद 13 के उपखण्ड 1 पर आधारित है। अनुच्छेद 13(1) के अनुसार संविधान पूर्व विधियां संविधान लागू होने पर उस मात्रा तक अवैध होगी जिस तक वे मूल अधिकारों से असंगत हैं। ऐसी विधियाँ प्रारम्भ से ही शून्य नहीं होतीं, बल्कि अधिकारों के प्रवर्तित हो जाने के कारण वे मृतप्राय हो जाती हैं और उनका प्रवर्तन नहीं किया जा सकता है। ऐसे कानून बिल्कुल लुप्त नहीं होते हैं। वे केवल मूल अधिकारों द्वारा आच्छादित हो जाते हैं और सुषुप्तावस्था में रहते हैं। संविधान लागू होने के पूर्व के सभी संव्यवहारों के लिए उनका अस्तित्व यथावत् वैध बना रहता है और ऐसी विधि के अन्तर्गत अर्जित किये गये अधिकारों और दायित्वों को प्रवर्तित किया जा सकता है।

अनुच्छेद 15 एवं 14 में विहित समता से सामान्य नियम का विशिष्ट उदाहरण है। जो विधि अनुच्छेद 15 के अन्तर्गत अवैध है वह अनुच्छेद 14 के अन्तर्गत युक्तियुक्त वर्गीकरण के सिद्धान्त के आधार पर विधिमान्य नहीं घोषित की जा सकती है। ऐसी विधियों द्वारा किये गये वर्गीकरण की अयुक्तियुक्ता पर अनुच्छेद 14 के अन्तर्गत तभी विचार किया जायेगा जब असमानता अनुच्छेद 15 में दिये किसी एक आधार पर आधारित हो।

VPM CLASSES

अनुच्छेद 15 में दिये गये अधिकार केवल नागरिकों को ही प्रदान किये गये हैं विदेशियों को नहीं, जबकि अनुच्छेद 14 के अधिकार नागरिकों और गैर नागरिकों दोनों को समान रूप से प्राप्त हैं।

अनच्छेद 15 का प्रथम खण्ड राज्य को केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म–स्थान अथवा इनमें से किसी आधार पर किसी नागरिक के विरूद्ध असमानता का व्यवहार करने से रोकता है। अनुच्छेद 15 का दूसरा खण्ड यह उपबन्ध करता है कि केवल धर्म, जाति, लिंग अथवा जन्म स्थान के आधार पर कोई नागरिक दुकानों, होटलों, मनोरंजन स्थानों, कुँओं, तालाबों, घाटों, सड़कों एवं अन्य सार्वजनिक स्थान जो जनता के उपयोग के लिए समर्पित कर दिये गये हैं, अथवा पूर्ण या आंशिक रूप से राज्य विधि द्वारा घोषित हैं, के उपयोग के सम्बन्ध में किसी शर्त, प्रतिबन्ध उत्तरदायित्व एवं अयोग्यता से प्रभावित न होगा। प्रथम खण्ड उन आधारों पर विभेद का प्रतिषेध करता है जो राज्य नियन्त्रण में है और दूसरा खण्ड राज्य और निजी व्यक्तियों, दोनों को सार्वजनिक स्थानों के सम्बन्ध में विभेद करने का निषेध करता है। अर्थ में खण्ड 2 खण्ड 1 से अधिक विस्तृत है। इस अनुच्छेद का तीसरा खण्ड राज्य की स्त्रियों और बालकों के लिए विशेष प्रावधान बनाने की शक्ति प्रदान करता है। चौथा खण्ड 1951 में संविधान के प्रथम संशोधन द्वारा जोड़ा गया है जो राज्य को सामाजिक एवं शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों एवं आदिवासियों के लिए विशेष अवस्थाओं में करने की अनुमति देता है। उपर्युक्त सभी खण्डों पर अब अलग अलग विचार किया जायेगा।

लोक सेवाओं में अवसर की समानता का अधिकार

अनुच्छेद 16 यह उपबन्धित करता है कि राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से सम्बन्धित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समता होगी। खण्ड 2 यह कहता है कि राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के सम्बन्ध में केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्मस्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर कोई भी नागरिक अपात्र नहीं होगा और न उससे विभेद किया जायेगा। इस प्रकार अनुच्छेद 16 के खण्ड 1 और 2 में राज्य की नौकरियों में समता का सामान्य नियम निहित है। राज्य के अधीन नियोजन या नियुक्ति के अवसर की समता के उक्त नियम के तीन अपवाद हैं जो खण्ड 3, 4 (4क) और 5 में उल्लिखित हैं। खण्ड 3 संसद को यह शक्ति प्रदान करता है कि वह विधि बनाकर सरकारी सेवाओं में नियुक्ति के लिए उस राज्य में "निवास" की अर्हता विहित कर सकती है। खण्ड 4 राज्य को सरकारी सेवाओं में "पिछड़े वर्गों" के लिए पदों के आरक्षण करने की शक्ति प्रदान करता है। 77 वें संविधान संशोधन 1995 द्वारा जोड़ा गया नया खण्ड (4–क) अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के वर्गों के लिए सरकारी सेवाओं में "प्रोन्नति में आरक्षण" करने की शक्ति प्रदान करता है। संविधान के 81 वें संशोधन अधिनियम 2000 द्वारा जोड़ा गया खण्ड 4(ख) यह उपबन्धित करता है कि इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य के उन रिक्तियों को जो अनुच्छेद 16(4) या खण्ड

4क के उपबन्धों के अनुसार किसी वर्ष में भरे जाने के लिए आरक्षित हैं, उन्हें अगले वर्ष या वर्षों में भरे जाने से नहीं रोकेगी और ऐसे वर्ग की रिक्तियों पर उस वर्ग की रिक्तियों के साथ, जिनमें उन्हें भरा जाना है, आरक्षण की 50 प्रतिशत सीमा के निर्धारण के प्रयोजन के लिए नही विचार किया जाएगा। ऐसी रिक्तियों को एक पृथक् वर्ग माना जाएगा और उन्हें अगले वर्षों में भरा जाएगा भले ही वे 50 प्रतिशत से बढ़ जाए। खण्ड 5 ऐसी विधियों के लागू होने को अनुच्छेद 1 और 2 के प्रभाव से बचाता है जो किसी धार्मिक या साम्प्रदायिक संस्था के किसी पद पर नियुक्ति के लिए किसी व्यक्ति के लिए किसी विशिष्ट धर्म की जानकारी रखने की अर्हता विहित करता है। राज्याधीन नियोजन में अवसर की समानता के सामान्य नियम के तीन अपवाद है जो खण्ड 3, 4, 5 में उल्लिखित हैं।

अस्पृश्यता का अन्त

अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता को समाप्त करता है और उसका किसी भी रूप में पालन करने का निषेध करता है। यह अस्पृश्यता से उत्पन्न किसी अयोग्यता को लागू करने को दण्डनीय अपराध घोषित करता है। इस प्रकार संविधान भारतीय समाज के परम्परा से चले आ रहे इस महान कलंक को समाप्त करने की ही घोषणा नहीं करता वरन् भविष्य में इसके किसी रूप में पालन करने को भी मना करता है।

उपाधियों का अन्त

अनुच्छेद 18 राज्य के किसी भी व्यक्ति को, चाहे वह नागरिक हो या विदेशी, को उपाधियाँ प्रदान करने से मना करता है। इस प्रकार यह अनुच्छेद भारत में ब्रिटिश शासन काल में प्रचलित सामंतशाही परम्परा का अन्त करता है, किन्तु अनुच्छेद 18 सेवा या विद्या सम्बन्धी उपाधियों को प्रदान करने की अनुमति देता है, क्योंकि उनसे व्यक्तियों में देश की सैनिक शक्ति को मजबूत करने तथा देश की प्रगति के लिए आवश्यक वैज्ञानिक विकास करने का प्रोत्साहन मिलता है।

इस अनुच्छेद का खण्ड 2 भारत के किसी नागरिक को किसी विदेशी सरकार से कोई उपाधि स्वीकार करने से मना करता है। खण्ड 3 के अनुसार कोई विदेशी व्यक्ति, जो राज्य के अधीन किसी विश्वसनीय पद पर हैं, बिना राष्ट्रपति की सम्मति के किसी विदेशी राज्य से कोई उपाधि स्वीकार नहीं कर सकता है। वह राज्य प्रशासन से सम्बन्धित मामलों पर से सभी प्रकार के विदेशी प्रभाव समाप्त करता है और व्यक्ति में भारत के प्रति निष्ठा की भावना का सृजन करता है।

खण्ड 4 यह उपबन्धित करता है कि कोई भी व्यक्ति, चाहे वह नागरिक हो या विदेशी जो राज्य के अधीन किसी विश्वसनीय पद पर है, किसी विदेशी राज्य से बिना राष्ट्रपति की सम्मति के कोई उपहार, उपाधि, वृति अथवा पद स्वीकार नहीं कर सकता है।

VPM CLASSES

स्वतन्त्रता का अधिकार

वैयक्तिक स्वतन्त्रता के अधिकार का स्थान मूल अधिकारों में सर्वोच्च माना जाता है। किसी विद्वान् ने ठीक ही कहा हैं कि "स्वतन्त्रता ही जीवन है" क्योंकि इस अधिकार के अभाव में मनुष्य के लिए अपने व्यक्तित्व का विकास करना संभव नहीं है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19 से 22 तक में भारत के नागरिकों को स्वतन्त्रता सम्बन्धी विभिन्न अधिकार प्रदान किये गये हैं। ये चारों अनुच्छेद दैहिक स्वतन्त्रता के अधिकारपत्र–स्वरूप हैं। उपर्युक्त स्वतन्त्रताएँ मूल अधिकारों की आधार स्तम्भ हैं। इनमें छह मूलभूत स्वतन्त्रताओं का स्थान सर्वप्रमुख है। अनुच्छेद 19 भारत के सब 'नागरिकों' को निम्नलिखित छह स्वतन्त्रताएँ प्रदान करता है –

1. वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य;
2. शान्तिपूर्वक और निरायुध सम्मेलन करने की स्वतन्त्रता;
3. संगम या संघ बनाने की स्वतन्त्रता;
4. भारत के राज्य क्षेत्र में सर्वत्र आवास संचरण की स्वतन्त्रता;
5. भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भाग में निवास करने और बस जाने की स्वतन्त्रता; और
6. कोई वृति, उपजीविका, व्यापार या कारबार करने की स्वतन्त्रता।

अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदत अधिकार केवल 'नागरिकों' को ही प्राप्त हैं – अनुच्छेद 19 में नागरिक शब्द का प्रयोग करके यह स्पष्ट कर दिया गया है कि इसमें प्रदत स्वतन्त्रताएं केवल भारत के नागरिकों को ही उपलब्ध हैं, किसी विदेशी को नहीं। इसी प्रकार एक कम्पनी भी नागरिक नहीं है, अतएव वह अनुच्छेद 19 में प्रदत अधिकारों का दावा नहीं कर सकती है। 'नागरिक' शब्द से केवल मनुष्य मात्र का बोध होता है, कृत्रिम व्यक्ति का नहीं, जैसे कि कम्पनी।

निर्बन्धन के आधार

अनुच्छेद 19(2) में निम्नलिखित आधारों का उल्लेख है जिनके आधार पर नागरिकों की वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता पर निर्बन्धन लगाये जा सकते हैं –

1. राज्य की सुरक्षा	2. विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के हित में;
3. लोक व्यवस्था	4. शिष्टाचार या सदाचार के हित में
5. न्यायालय अवमान	6. मानहानि
7. अपराध उद्दीपन के मामले में	8. भारत की प्रभुता एवं अखण्डता।

अनुच्छेद 20 उन व्यक्तियों को, जिन पर अपराध करने का अभियोग लगाया गया है, निम्नलिखित सांविधानिक संरक्षण प्रदान करता है –

1. कार्योतर विधियों से संरक्षण

2. दोहरे दण्ड से संरक्षण

3. आत्म अभिशंसन से संरक्षण

कार्योतर विधियों से संरक्षण

अनुच्छेद 20 का खण्ड 1 यह उपबन्धित करता है कि कोई व्यक्ति केवल किसी प्रवृत विधि के अन्तर्गत विहित अपराध के लिए दोषी ठहराया जायेगा अन्य अपराध के लिए नहीं और न ही वह अधिक दण्ड का पात्र होगा, जो अपराध करने के समय प्रवृत विधि के अधीन दिया जा सकता था। कार्योतर विधि वह विधि है जो अपराध नहीं था या प्रवृत विधि में विहित दण्ड की मात्रा को बढ़ा देती है।

दोहरे दण्ड से संरक्षण

अनुच्छेद 20 खण्ड 2 यह उपबन्धित करता है कि कोई व्यक्ति एक ही अपराध के लिए एक बार से अधिक 'अभियोजित' और 'दण्डित' नहीं किया जायेगा। यह उपबन्ध आंग्ल विधि के सिद्धान्त पर आधारित है, जिसके अनुसार किसी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिए दो बार अभियोजित और दण्डित नहीं किया जा सकता है।

आत्म–अभिशंसन

अनुच्छेद 20 का खण्ड 3 यह उपबन्धित करता है कि किसी भी व्यक्ति को, जिस पर कोई अपराध लगाया गया है, स्वयं अपने विरूद्ध साक्ष्य देने के लिए बाध्य नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद 20 (3) का संरक्षण तभी मिलेगा जब निम्नलिखित शर्तें पूरी हों –

1. व्यक्ति पर अपराध करने का आरोप लगाया गया हो।

2. उसे अपने विरूद्ध गवाही देने के लिए बाध्य किया गया हो।

3. उसे अपने ही विरूद्ध गवाही देने के लिए बाध्य किया जाऐ।

प्राण और दैहिक स्वतन्त्रता का संरक्षण

अनुच्छेद 21 या उपबन्धित करता है कि 'किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वाधीनता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जायेगा अन्यथा नहीं।

प्राण एवं दैहिक स्वतन्त्रता का अधिकार सभी अधिकारों में श्रेष्ठ है और अनुच्छेद 21 इसी अधिकार को संरक्षण प्रदान करता है।

अनुच्छेद 21 विधायिका तथा कार्य पालिका दोनों के विरूद्ध संरक्षण प्रदान करता है – गोपालन बनाव मद्रास राज्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि अनुच्छेद 21 केवल कार्यपालिका के कृत्यों के विरूद्ध संरक्षण प्रदान करता है, विधान मंडल के विरूद्ध नहीं। अतएव विधान मण्डल कोई विधि पारित करके

VPM CLASSES

किसी व्यक्ति को उसके प्राण एवं दैहिक स्वतन्त्रता से वंचित कर सकता है। किन्तु मेनका गाँधी बनाम भारत संघ के मामले में उच्चतम न्यायालय ने गोपालन के मामले में दिये अपने निर्णय को उलट दिया है और यह निर्णय दिया है कि अनुच्छेद 21 केवल कार्यपालिका के कृत्यों के विरूद्ध ही नहीं बल्कि विधायिका के विरूद्ध भी संरक्षण प्रदान करता है। विधान मण्डल द्वारा पारित किसी विधि के अधीन विहित प्रक्रिया, जो किसी व्यक्ति को उसके प्राण एवं दैहिक स्वाधीनता से वंचित करती है, उचित, और युक्तियुक्त अर्थात् नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों के अनुरूप होनी चाहिए।

बन्दीकरण एवं निरोध के विरूद्ध संविधानिक संरक्षण

अनुच्छेद 22 के अनुसार गिरफ्तारियाँ दो प्रकार की हो सकती है –

1. सामान्य दण्ड विधि के अधीन   2. निवारक निरोध विधि के अधीन

अनुच्छेद 22 के खण्ड 1 एवं 2 सामान्य दण्ड विधि के अधीन गिरफ्तारियों से सम्बन्धित हैं और उस प्रक्रिया को विहित करते हैं जिसका पालन किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करते समय किया जाना चाहिये। खण्ड 3, 4, 5, 6, 7 निवारक निरोध विधि के अधीन गिरफ्तारी से सम्बन्धित हैं और उस प्रक्रिया को विहित करते हैं जिसका पालन किया जाना आवश्यक है।

सामान्य विधि के अधीन गिरफ्तारी से संरक्षण

अनुच्छेद 22 के खण्ड 1 और 2 किसी अपराध के सम्बन्ध में गिरफ्तार हुए व्यक्तियों को निम्नलिखित अधिकार प्रदान करते हैं –

1. गिरफ्तारी के कारणों को शीघ्रातिशीघ्र बताये जाने के अधिकार।
2. अपनी रुचि के वकील से परामर्श करने और बचाव करने का अधिकार।
3. गिरफ्तारी के बाद 24 घण्टों के अन्दर किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किये जाने का अधिकार।
4. 24 घण्टों से अधिक मजिस्ट्रेट के आदेश बिना निरोध से स्वतन्त्रता।

उक्त संरक्षणों का उल्लंघन गिरफ्तारी को असंवैधानिक बना देता है।

शोषण के विरूद्ध अधिकार

मानव दुर्व्यापार और बलात्श्रम का प्रतिषेध

अनुच्छेद 23 मानव का दुर्व्यापार और बेगार तथा इसी प्रकार के अन्य बलातश्रम को प्रतिषिद्ध करता है। यह अनुच्छेद यह भी कहता है कि इस उपबन्ध का कोई उल्लंघन अपराध होगा और विधि के अनुसार दण्डनीय होगा। अनुच्छेद 23 व्यक्ति को न केवल राज्य के विरूद्ध संरक्षण प्रदान करता है वरन प्राइवेट व्यक्तियों के विरूद्ध भी संरक्षण प्रदान करता है।

VPM CLASSES

बालक को संकटपूर्ण नियोजनों में लगाने का प्रतिषेध

अनुच्छेद 24 चौदह वर्ष के कम आयु के बालकों को किसी कारखाने या खान अथवा किसी अन्य जोखिम भरे कार्यों में लगाने का प्रतिषेध करता है।

अनुच्छेद 25(1) सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थय तथा इस भाग के दूसरे उपबन्धों के अधीन रहते हुए सभी व्यक्तियों को अन्तःकरण की स्वतन्त्रता तथा धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने का अधिकार प्रदान करता है। किन्तु धर्म स्वातन्त्रय का यह अधिकार भी अन्य अधिकारों की ही भाँति आत्यन्तिक अधिकार नहीं है। अनुच्छेद 25 के खण्ड 2 के उपखण्ड (क) और (ख) के अधीन राज्य इस अधिकार पर विधि बना कर निम्नलिखित आधारों पर निर्बन्धन लगा सकता है –

(क) धार्मिक आचरण से सम्बद्ध किसी आर्थिक, वित्तीय, राजनैतिक या अन्य लौकिक क्रियाओं को विनियमित या निर्बन्धित करने के लिए।

(ख) सामाजिक कल्याण और सुधार के लिए अथवा हिन्दुओं की सार्वजनिक कार्य संस्थाओं के सभी वर्गों और विभागों के लिए।

अनुच्छेद 25 के अधीन को दो प्रकार के अधिकार प्राप्त है –

1. अन्तःकरण की स्वतन्त्रता।
2. धर्म को 'अबाध मानने' आचरण और प्रचार करने की स्वतन्त्रता।

धार्मिक कार्यों के प्रबन्ध की स्वतन्त्रता

सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य के अधीन रहते हुए प्रत्येक धार्मिक सम्प्रदाय या उसके किसी वर्ग को अनुच्छेद 26 के अधीन निम्नलिखित अधिकार होगा –

1. धार्मिक और पूर्त प्रयोजनों के लिए संस्थओं की स्थापना और पोषण का,
2. अपने धार्मिक कार्यों सम्बन्धी विषयों का प्रबन्ध करने का
3. जंगम और स्थावर सम्पति के अर्जन और स्वामित्व का,
4. ऐसी सम्पति के विधि अनुसार प्रशासन करने का।

किसी विशेष धर्म की उन्नति के लिए कर न देने की स्वतन्त्रता

अनुच्छेद 27 यह उपबन्धित करता है कि कोई भी किसी व्यक्ति, किसी विशेष धर्म अथवा सम्प्रदाय की उन्नति के लिए कर देने के लिए बाध्य नहीं किया जायगा। यह अनुच्छेद राज्य की धर्म निरपेक्षता को और भी अधिक स्पष्ट कर देता है। राज्य कर के रूप में एकत्रित किये गये जनता के धन को किसी विशेष धर्म की उन्नति के लिए खर्च नहीं कर सकता ळें

VPM CLASSES

राज्य पोषित शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या उपासना का प्रतिषेध

अनुच्छेद 28(1) यह उपबन्धित करता है कि राज्यनिधि से पूरी तरह से पोषित किसी शिक्षा संस्था में कोई धार्मिक शिक्षा न दी जायेगी। यह खण्ड उन शिक्षा संस्थाओं पर लागू नहीं होता है जिनका प्रशासन राज्य करता हो; किन्तु जो किसी ऐसे धर्मस्व या न्यास के अधीन स्थापित हुई हैं, जिनके अनुसार उस संस्था में धार्मिक शिक्षा देना आवश्यक है। खण्ड 3 के अनुसार राज्य से मान्यता प्राप्त या राज्यनिधि से पोषित होने वाली शिक्षा संस्था में उपस्थित होने वाली किसी व्यक्ति को धार्मिक शिक्षा या उपासना में भाग लेने के लिए बाध्य न किया जायेगा, जब तक कि उस व्यक्ति ने यदि यह आवश्यक है तो उसके संरक्षक ने इसके लिए अपनी सम्मति न दे दी हो।

संस्कृति और शिक्षा सम्बन्धी अधिकार

अनुच्छेद 29(1) भारत क्षेत्र में रहने वाले नागरिकों के किसी भी वर्ग को, जिनकी अपनी विशेष भाषा, लिपि या संस्कृति है, उसे बनाये रखने का अधिकार प्रदान करता है। इस अनुच्छेद का उद्देश्य अल्पसंख्यकों के हितों को सुरक्षित करना है ऐसा वे अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति को अपनी रूचि की संस्थाओं को स्थापित करके ही सुरक्षित रख सकते हैं। यह अधिकार उन्हें अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्रदान किया गया है, जो अल्पसंख्यकों को अपनी रुचि के अनुसार शिक्षा संस्थाओं को स्थापित करने और उन पर प्रशासन करने का अधिकार प्रदान करता है। इस अनुच्छेद का खण्ड 2 इस अधिकार को और भी सुदृढ़ बना देता है जिसके अनुसार राज्य शिक्षा संस्थाओं को सहायता देने में किसी विद्यालय के विरूद्ध इस आधार पर विभेद न करेगा कि वह धर्म एवं भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक के प्रबन्ध में है। किन्तु यह खण्ड अनुच्छेद 29(2) के अधीन है जिसके अनुसार राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्यनिधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश पाने से किसी भी नागरिक को केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा अथवा इनमें से किसी भी आधार पर वंचित न किया जायेगा। अनुच्छेद 30 द्वारा प्रदत्त अधिकार केवल 'नागरिक' को ही प्राप्त है।

सांविधानिक उपचारों के अधिकार

अधिकारों का अस्तित्व ही उपचारों पर आधारित हैं। उपचारों के अभाव में अधिकारों का अस्तित्व की सम्भव नहीं। भारतीय संविधान में जहाँ अधिकारों का विशद् उल्लेख किया गया हैं, वहीं इन अधिकारों के प्रवर्तन के लिए उपचारों का भी समावेश किया गया है। अनुच्छेद 32 संविधान के भाग 3 में होने के कारण स्वयं एक मूल अधिकार है।

अनुच्छेद 32(1) नागरिकों को संविधान के भाग 3 द्वारा प्रदत अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए उच्चतम न्यायालय का समुचित कार्यवाहियों द्वारा प्रचालित करने के अधिकार की गारन्टी करता है। अनुच्छेद 32(2) उच्चतम न्यायालय को इन अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए समुचित निदेश या रिट, जिनके अन्तर्गत

बंदी–प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार पृच्छा और उत्प्रेषण के प्रकार के रिट, भी सम्मिलित हैं, जारी करने की शक्ति प्रदान करता है।

संविधान के 42 वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा संविधान के भाग 4 के पश्चात् एक नया भाग 4– क जोड़ा गया है जिसके द्वारा पहली बार संविधान में नागरिकों के मूल कर्तव्यों का समाविष्ट किया गया है। नये अनुच्छेद 51 (क) के अनुसार भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह –

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे ;

(ख) स्वतन्त्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आन्दोलनों को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोये रखे और उसका पालन करे ;

(ग) भारत की प्रभुता, एकता और अखण्डता की रक्षा करे और अक्षुण्ण बनाये रखे;

(घ) देश की रक्षा करे और आवाहन किये जाने पर राष्ट्र की सेवा करे ;

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे, जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो ; ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध हैं ;

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परम्परा का महत्व समझे और उसका परिरक्षण करे ;

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की ; जिसके अन्तर्गत वन, झील, नदी, और वन्य जीव भी हैं, रक्षा करे, उनका संवर्द्धन करे तथा प्राणिमात्र के प्रति दया भाव रखे ;

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे ;

(झ) सार्वजनिक सम्पत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहें ;

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत् प्रयास करे जिससे राष्ट्र निरन्तर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊँचाइयों को छू ले।

मूल कर्तव्य

86 वें संविधान संशोधन अधिनियम 2002 द्वारा अनुच्छेद 51 (क) में एक नया खण्ड (र) जोड़ा गया है। जिसके अनुसार – '' छः वर्ष की आयु से 14 वर्ष की आयु के बालकों के माता पिता और प्रतिपाल्य के संरक्षकों का यह कर्तव्य होगा कि वे उन्हें शिक्षा का अवसर प्रदान करे।''

राज्य के नीति निदेशक तत्व–

ये तत्व आयर लैण्ड के संविधान से लिए गए है–

संविधान के भाग 4 में अनुच्छेद 36 – 51 तक राज्य के निदेशक तत्वों का उल्लेख किया गया है।

डॉ. अम्बेडकर ने इन्हें भारतीय संविधान की अनोखी विशेषताए कहा है।

VPM CLASSES

- अनुच्छेद 36 राज्य की परिभाषा का उल्लेख करता है। जिसके अनुसार जब तक कि संदर्भ में अन्यथा अपेक्षित न हो, राज्य की वही अर्थ है, जो संविधान के भाग –3 (अनुच्छेद 12) में है।
- अनुच्छेद 37 राज्य के नीति निदेशक तत्वों की न्यायालय द्वारा अप्रवर्तनीयता का उल्लेख करता हैं। इनको न्यायालयों द्वारा प्रवर्तन न करा पाने के आधार पर आलोचना की गई, जिसका उत्तर डॉ. अम्बेडकर ने निम्न शब्दों में दिया – ''यह कहा जाता है कि निदेशक सिद्धान्त कोई विधिक शक्ति नहीं रखते हैं। मैं इसे मानने को तैयार नहीं हूँ और मैं यह भी मानने को तैयार नहीं हूँ कि उनमें किसी प्रकार की बाध्यता का बल नहीं हैं, न तो मैं यह भी स्वीकार करने को तैयार हूँ कि वे निरर्थक हैं, क्योंकि विधिक दृष्टि से उनमें कोई बल नहीं है।''
- अनुच्छेद 38 राज्य को लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था को प्रभावी रूप से स्थापित एवं संरक्षित करने का निर्देश देता है।
- 44 वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा अनुच्छेद 38 में नया खण्ड (2) जोड़ा गया जिसके अनुसार राज्य आय की असमानता को कम करेगा और न केवल व्यक्तियों के बीच वरन् विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए लोगों के समूहों के बीच प्रतिष्ठा, सुविधाओं और अवसरों की असमानता समाप्त करने का प्रयास करेगा।
- अनुच्छेद 39 राज्य द्वारा अनुसरणीय उन नीति–निदेशक तत्वों का उल्लेख करता है जिससे आर्थिक न्याय प्राप्त हो सके।
- अनुच्छेद 39 में खण्ड (च) 42 वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा जोड़ा गया है, जिसमें बालकों के विषय में राज्य की रचनात्मक भूमिका की अपेक्षा की गई है.
- अनुच्छेद 39 (क) 42 वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा जोड़ा गया जिसके अनुसार राज्य को यह निदेशित किया गया कि वह गरीबों को निशुल्क विधिक सहायता उपलब्ध कराए तथा सभी को समान रूप से न्याय प्राप्त हो इसके लिए कदम उठाए।
- अनुच्छेद 40 राज्य को ग्राम पंचायतों के संगठन, उनकी शक्तियों एवं प्राधिकार के संदर्भ में निदेशित करता है, ताकि वे स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने के योग्य बन सकें।
- अनुच्छेद 41 काम पाने का, शिक्षा पाने का और बेकारी, बुढापा, बीमारी और निशक्तता तथा अन्य अनर्ह अभाव की दशाओं में लोक सहायता पाने के अधिकार को प्राप्त कराने हेतु राज्य को निदेशित करता है जिसके संदर्भ में प्रभावी उपबन्ध, राज्य अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर करेगा।
- अनुच्छेद 42 राज्य को निदेशित करता है कि वह काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता के लिए उपबन्ध करेगा।

VPM CLASSES

- अनुच्छेद 43 सभी प्रकार के कर्मकारों के लिए काम, निर्वाह मजदूरी आदि तथा कुटीर उद्योगों को वैयक्तिक या सहकारी आधार पर बढ़ाने का उपबन्ध करता है।
- अनुच्छेद 43 (क) उद्योगों के प्रबन्ध में कर्मकारों का भाग लेना सुनिश्चित करने के लिए राज्य को निर्देशित करता है, यह 42 वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा जोड़ा गया। यह 'आर्थिक न्याय' की दिशा में उठाया गया एक सकारात्मक कदम है।
- अनुच्छेद 44 नागरिकों के लिए एकसमान सिविल संहिता बनाने का उपबन्ध करता है।
- अनुच्छेद 45 सभी बालकों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा (14 वर्ष की आयु पूरी करने तक) प्रदान करने का निर्देश देता है।
- अनुच्छेद 45 इस प्रकार है – राज्य को सभी बच्चों को तब तक के लिए शुरूआती देखभाल और शिक्षा की व्यवस्था करने के लिए प्रयास करना होगा, जब तक वह छ साल की आयु का नहीं हो जाता।
- अनुच्छेद 46 समाज के दुर्बल वर्गों के विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के, शिक्षा तथा अर्थ सम्बन्धी हितों की अभिवृद्धि करने का निर्देश राज्य को देता हैं।
- अनुच्छेद 47 राज्य को निर्देशित करता है कि वह अपने लोगों के पोषाहार स्तर और जीवन–स्तर को ऊचाँ करने तथा लोक स्वास्थ्य को सुधारने के साथ–साथ मादक पेयों और स्वास्थ्य के लिए हानिकर औषधियों के, औषधीय प्रयोजनों से भिन्न उपयोग का प्रतिषेध करने का प्रयास करेगा।
- अनुच्छेद 48 कृषि और पशुपालन को वैज्ञानिक प्रणालियों पर संगठित किए जाने का प्रावधान करता है।
- अनुच्छेद 48 (क) 42 वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा संविधान में जोड़ा गया, जिसमें राज्य से अपेक्षा की गई है कि वह देश के पर्यावरण के संरक्षण तथा सम्वर्द्धन का एवं वन तथा वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा।
- अनुच्छेद 49 के अनुसार कलात्मक या ऐतिहासिक अभिरूचि वाले प्रत्येक स्मारक या स्थान या वस्तु की यथास्थिति लुंठन, विरूपण विनाश, अपसारण व्ययन अथवा निर्यात से संरक्षण करना राज्य की बाध्यता होगी।
- अनुच्छेद 50 यह अपेक्षा करता है कि राज्य लोक सेवाओं में न्यायापालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने के लिए कदम उठाएगा।
- अनुच्छेद 52 के अनुसार, राज्य अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा की अभिवृद्धि का, राष्ट्रों के बीच न्यायसंगत और सम्मानपूर्ण सम्बन्धों को बनाए रखने का, एक–दूसरे से व्यवहारों में अन्तरार्ष्ट्रीय विधि और सन्धि –बाध्यताओं के प्रति आदर बढाने का और अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को माध्यस्थम् द्वारा निपटाने हेतु प्रोत्साहन देने का प्रयाय करेगा।

VPM CLASSES

न्यायपालिका

- संविधान के उपबन्धों की व्याख्या के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय देने का प्राधिकार उच्चतम न्यायालय को है जिससे सभी न्यायालय आबद्ध होते हैं।
- जी. आस्टिन के शब्दों में, ''उच्चतम न्यायालय को नागरिकों और अल्पसंख्यकों के अधिकारों के संरक्षण का कार्य सौंपकर वस्तुत : सामाजिक क्रान्ति के संरक्षक का भार सौपा गया हैं।''
- उच्चतम न्यायालय देश की साधारण विधियों की व्याख्या के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय देने के साथ–साथ सिविल एवं फौजदारी के मुकदमों का सर्वोच्च अपीलीय न्यायालय भी है।
- अनुच्छेंद 124 भारत के लिए एक उच्चतम न्यायालय की स्थापना का प्रावधान करता है।
- वर्तमान में उच्चतम न्यायालय में मुख्य न्यायाधीश समेत कुल न्यायाधीशों की संख्या 26 हैं। प्रारम्भ में कुल आठ थे।
- उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति की अर्हता का उल्लेख अनुच्छेद 124(3) में किया गया है जिसके अनुसार कोई भी व्यक्ति जो भारत का नागरिक हो तथा (क) किसी उच्च न्यायालय का या ऐसे दो या अधिक न्यायालयों का लगातार कम से कम पाँच वर्ष तक न्यायाधीश रहा हो या (ख) किसी उच्च न्यायालय का या ऐसे दो या अधिक न्यायालयों का लगातार कम से कम दस वर्ष तक अधिवक्ता रहा हो या (ग) राष्ट्रपति की राय में पारंगत विधिवेत्ता हो।
- उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है, परन्तु अनुच्छेद 124(2) के अनुसार मुख्य न्यायमूर्ति से भिन्न किसी न्यायाधीश की नियुक्ति की दशा में भारत के मुख्य न्यायामूर्ति से सदैव परामर्श किया जाएगा।
- उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश पैंसठ वर्ष तक पद धारण करते हैं तथा इसके पूर्व किसी न्यायाधीश को उसके पर से तब तक नहीं हटाया जा सकता जब तक साबित कदाचार या असमर्थता के आधार पर ऐसे हटाए जाने के लिए संसद के प्रत्येक सदन द्वारा अपनी कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के कम–से कम दो–तिहाई बहुमत द्वारा समर्थित समावेदन, राष्ट्रपति के समक्ष उसी सत्र में रखे जाने पर राष्ट्रपति के समक्ष उसी सत्र में रखे जाने पर राष्ट्रपति ने आदेश नहीं दे दिया हैं।
- उच्चतम न्यायालय को भारतीय संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों द्वारा निम्न आधिकारिता प्राप्त हैं–

1. अभिलेख न्यायालय, 2. प्रारम्भिक अधिकारिता, 3. अपीलीय अधिकारिता,
4. विशेष अनुमति से अपील, 5. परामर्शदात्री आधिकारिता।

VPM CLASSES

- अनुच्छेद 129 उच्चतम न्यायालय को अभिलेख न्यायालय होना उपबन्धित करता है। अभिलेख न्यायालय से तात्पर्य है कि न्यायालय के निर्णय और कार्यवाहियाँ लिखित होती हैं तथा उन्हें भविष्य में अधीनस्थ न्यायालयों के समक्ष पूर्व निर्णय के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। उच्चतम न्यायालय को अपने अवमान के लिए दण्ड देने की शक्ति भी है।
- उच्चतम न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 131 द्वारा निम्न पक्षकारों के मध्य उत्पन्न विवादों के संदर्भ में प्रारम्भिक अधिकारिता प्राप्त है–

(क) भारत सरकार और एक या अधिक राज्यों के बीच, या

(ख) एक ओर भारत सरकार और किसी राज्य या राज्यों और दूसरी ओर एक या अधिक अन्य राज्यों के बीच, या

(ग) दो या दो से अधिक राज्यों के बीच

- उच्चतम न्यायालय को अनुच्छेद 132 के अन्तर्गत सभी राज्यों के उच्च न्यायालयों के निर्णय के विरूद्ध अपील सुनने का अधिकार प्राप्त हैं. इसकी अपीलीय अधिकारिता के निम्न क्षेत्र है।

(i) सांविधानिक मामलों में अपील (अनुच्छेद 132 (1) के तहत्)

(ii) सिविल मामलों में अपील (अनुच्छेद 133 के तहत्)

(iii) दाण्डिक विषयों में अपील (अनुच्छेद 134 के तहत्)

(iv) विशेष अनुमति से अपील (अनुच्छेद 136 के तहत्)

- उच्चतम न्यायालय की परामर्शदात्री अधिकारिता का उल्लेख अनुच्छेद 143 में किया गया है। जिसके अनुसार, ''यदि किसी समय राष्ट्रपति को प्रतीत होता है। कि विधि या तथ्य का कोई ऐसा प्रश्न उत्पन्न हुआ है या उत्पन्न होने की संभावना है, जो ऐसी प्रकृति का और ऐसे व्यापक महत्व का है कि उस पर उच्चतम न्यायालय की राय प्राप्त करना समीचीन है, जो वह उस प्रश्न को विचार करने के लिए उस न्यायालय को निदेशित कर सकेगा और वह न्यायालय, ऐसी सुनवाई के पश्चात् जो वह ठीक समझता है, राष्ट्रपति को उस पर अपनी राय प्रतिवेदित करेगा। अनुच्छेद 143 (2) राष्ट्रपति को अनुच्छेद 131 के परन्तुक में उल्लिखित बात के लिए भी उच्चतम न्यायालय से राय लेने का अधिकार प्रदान करता है।

उच्च न्यायालय

- अनुच्छेद 214 प्रत्येक राज्य के लिए एक उच्च न्यायालय का प्रावधान करता है।
- अनुच्छेद 231 संसद को यह अधिकार देता है कि वह विधि द्वारा दो या दो से अधिक राज्यों के लिए अथवा दो या अधिक राज्यों और किसी संघ राज्य क्षेत्र के लिए एक ही उच्च न्यायालय स्थापित कर सकेगी।

VPM CLASSES

- अनुच्छेद 216 के अनुसार प्रत्येक उच्च न्यायालय में एक मुख्य न्यायमूर्ति होता है तथा अन्य ऐसे न्यायाधीश जिन्हें समय–समय पर राष्ट्रपति नियुक्त करना आवश्यक समझता है। उच्चतम न्यायाधीशों की संख्या का निर्धारण नहीं किया गया है।
- अनुच्छेद 217 उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं उनके पद की शर्तों का उल्लेख करता है। जिसके अनुसार मुख्य न्यायमूर्ति की नियुक्ति राष्ट्रपति उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति और राज्य के राज्यपाल के परामर्श से करता है। तथा अन्य न्यायाधिशों की नियुक्ति करते समय वह उक्त व्यक्तियों के अतिरिक्त सम्बन्धित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश से परामर्श लेकर करता है, उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का कार्य काल 62 वर्ष की आयु पर्यन्त रहता है।
- अनुच्छेद 217 के उपखण्ड (2) में उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति हेतु एक व्यक्ति में उसके भारत का नागरिक होने के साथ निम्न अपेक्षाओं का उल्लेख है–

(क) भारत के राज्य क्षेत्र में कम–से–कम दस वर्ष तक न्यायिक पद धारण कर चुका है, या

(ख) किसी उच्च न्यायालय का या ऐसे दो या अधिक न्यायालयों का लगातार कम–से कम दस वर्ष तक अधिवक्ता रहा है।

- उच्च न्यायालय को निम्नलिखित अधिकारिता संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों द्वारा प्रदान की गई है–

1. अभिलेख न्यायालय की आधिकारिता (अनुच्छेद 215)
2. वर्तमान उच्च न्यायालयों की अधिकारिता (अनुच्छेद 225)
3. अधीनस्थ न्यायालयों पर निरीक्षण की आधिकारिता (अनुच्छेद 227)
4. लेख सम्बन्धी अधिकारिता (अनुच्छेद 226)

- अनुच्छेद 226 के अनुसार संविधान के अनुच्छेद 32 में किसी बात के होते हुए भी प्रत्येक उच्च न्यायालय को उन समस्त क्षेत्रों में जिनके सम्बन्ध में वह अपनी अधिकारिता का प्रयोग करता है, संविधान के भाग–3 में प्रदत्त मूल अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए और किसी अन्य प्रयोजन के लिए सम्बन्धित राज्यों में किसी व्यक्ति या प्राधिकारी को समुचित राज्यों में किसी व्यक्ति या प्राधिकारी को समुचित मामलों में किसी सरकार को ऐसे निर्देश या आदेश या रिट् जारी करने की शक्ति है।

रिट्स के प्रकार एवं उनकी प्रकृति

बन्दी प्रत्यक्षीकरण – हैबियस कॉर्पस एक लेटिन पद है जिसका शाब्दिक अर्थ है–''निरूद्ध व्यक्ति को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करों।'' यह रिट् किसी निरूद्ध व्यक्ति को न्यायालय के समझ प्रस्तुत करने का आदेश हैं। यदि निरोध का कोई विधिक औचित्य नहीं है, तो न्यायालय निरूद्ध व्यक्ति को छोड़ देता है।

परमादेश – मैन्डमस का तात्पर्य है– ''हम आदेश देते हैं।'' किसी व्यक्ति या लोक
प्राधिकारी, जिसके अन्तर्गत सरकार और निगम भी सम्मिलित हैं, को उनके विधिक या लोक कर्तव्य या किसी संविधि के अधीन आरोपित कर्तव्य या किसी संविधि के अधीन आरोपित कर्तव्य को करने का आदेश दिया जाता है या उन कर्तव्यों को अवैध रूप से न करने का आदेश दिया जाता है।

प्रतिषेध – यह एक न्यायिक रिट् है जो किसी वरिष्ठ न्यायालय द्वारा अपने अधीनस्थ न्यायालयों या अधिकरणों को अपनी अधिकारिता से बाहर जाने या प्राकृतिक न्याय के नियमों के विरूद्ध कार्य करने से रोकने के लिए जारी किया जाता है। यह रिट् एक कार्यवाही के मध्य जारी होता है, जिससे उस कार्यवाही को रोका जा सके यदि उससे न्यायिक त्रुटि होने की संभावना हैं।

उत्प्रेषण – यह भी एक न्यायिक रिट् है जिसके द्वारा वरिष्ठ न्यायालय द्वारा अधीनस्थ न्यायालयों या न्यायिक अथवा अर्द्ध–न्यायकि कार्य करने वाले निकायों में चलने वाले वादों में वरिष्ठ न्यायालयों के पास भेजने का आदेश दिया जाता है। जिससे उनके निर्णय की जाँच की जा सके और यदि वे दोषपूर्ण हों, तो उन्हें रद्द किया जा सके। इस रिट् का मुख्य उद्देश्य न्यायिक त्रुटि को सुधारना है।

• **अधिकार पृच्छा –** 'को वारन्टो' का शाब्दिक अर्थ है– 'आपका प्राधिकार क्या है ?' इस रिट् द्वारा किसी व्यक्ति को उस पद को धारण करने से रोका जाता है जिसे धारण करने का उसे कोई वैध अधिकार प्राप्त नहीं हो, किन्तु महत्वपूर्ण यह है कि वह विवादास्पद पर सार्वजनिक प्रकृति का होना चाहिए।

कार्यपालिका

भारतीय संविधान में भारत में संसदीय सरकार का उपबन्ध किया है, जिसका सांविधानिक अध्यक्ष राष्ट्रपति होता है, किन्तु वास्तिविक शक्ति मंत्री परिषद् में निहित होती है, जिसका प्रधान प्रधानमंत्री होता है।

राष्ट्रपति

अनुच्छेद 52 यह उपबन्धित करता है कि भारत का एक राष्ट्रपति होगा। अनु. 53 यह कहता है कि संघ की कार्यपालिका– शक्ति राष्ट्रपति में निहित होगी और वह इसका प्रयोग इस संविधान के अनुसार या तो स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारी के द्वारा करेगा।

अनुच्छेद 58 के अनुसार राष्ट्रपति के पद के लिये पात्र होने वाले व्यक्ति को निम्नलिखित अर्हताएँ रखनी चाहिए – (1) उसे भारत का नागरिक होना चाहिए ; (2) उसे 35 वर्ष की आयु का होना चाहिए ; तथा (3) लोकसभा का सदस्य निर्वाचित होने की अर्हता रखनी चाहिए, अर्थात् उसका नाम किसी संसदीय निर्वाचन – मण्डल में मतदाता के रूप में पंजीकृत होना चाहिए और (4) उसे भारत सरकार अथवा किसी राज्य–सरकार के अधीन

VPM CLASSES

अथवा उक्त सरकारों में से किसी के अधीन नियंत्रित किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन कोई लाभ का पद धारण किये हुए नहीं होना चाहिए।

राष्ट्रपति के विशेषाधिकार – अनुच्छेद 361 राष्ट्रपति को निम्नलिखित विशेषाधिकार प्रदान करता है–

(1) अनु. 361 (1) के अनुसार राष्ट्रपति अपने पद की शक्तियों का प्रयोग और कर्तव्यों के पालन के लिए या उन शक्तियों का प्रयोग और कर्तव्यों का पालन करते हुए अपने द्वारा किए गए या किए जाने के लिए तात्पर्यित किसी कार्य के लिए किसी न्यायालय को उत्तरदायी नहीं होगा। किन्तु यह अनु. 61 के अधीन महाभियोग के आरोप की जाँच के लिए संसद के किसी सदन द्वारा नियुक्त या निदिष्ट किसी न्यायालय, न्यायाधिकरण या निकाय द्वारा राष्ट्रपति के आचरण का पुनर्विलोकन किये जाने का निषेध नहीं करता है।

(1)खंड (1) के अधीन दी गई विमुख राष्ट्रपति की वैयक्तिक विमुक्ति है और वह किसी भी व्यक्ति के भारत सरकार या राज्य–सरकार के विरूद्ध समुचित कार्यवाहियों के चलाने के

अधिकार को निर्बन्धित नहीं करती हैं।

(2) खण्ड (2) के अनुसार राष्ट्रपति के विरूद्ध उसकी पदावधि के दौरान किसी न्यायालय में किसी भी प्रकार की दाण्डिक कार्यवाही न तो संस्थित की जाएगी और न चालू रखी जायेगी।

(3) खण्ड (3) के अनुसार राष्ट्रपति की पदावधि के दौरान किसी भी न्यायालय को उसे बन्दी बनाने या कारावासित करने के लिए कोई भी आदेशिक जारी करने की शक्ति नहीं है।

(4) खण्ड (4) के अनुसार राष्ट्रपति द्वारा वैयक्तिक रूप में किए जाने के लिए तात्पर्यित किसी कार्य के सम्बन्ध में अनुतोष का दावा करने वाली कोई सिविल कार्यवाहियाँ उसके कार्य–काल में तब तक संस्थित न की जायेगी जब तक कि (क) इसकी लिखित सूचना राष्ट्रपति को न दे दी गई हों, (ख) ऐसी सूचना के बाद 2 माह बीत न गयें हों तथा (ग) इस सूचना में उस कार्यवाही की प्रकृति, वाद–कारण, पक्षकार का नाम, विवरण, निवास –स्थान तथा माँग किये जाने वाले अनुतोष का विवरण न दिया गया हो। सिविल कार्यवाहियों प्रयोजन के लिए राष्ट्रपति के अपने पद की शक्तियों के प्रयोग में किये गयें और वैयक्तिक रूप से किये गये कार्यों में अन्तर किया गया है। जहाँ तक उसके पद की शक्तियों के प्रयोग में किये गये कार्यों का प्रश्न है, उसे पूर्ण विमुक्ति प्राप्त है। किन्तु जहाँ तक उसके वैयक्तिक कार्यों का सम्बन्ध है, विमुक्ति बड़ी सीमित है और उसके विरूद्ध केवल 2 महीने की नोटिस देकर कार्यवाही चलायी जा सकती है।

उपराष्ट्रपति

उपराष्ट्रपति का निर्वाचन – भारत का एक उपराष्ट्रपति भी होगा। उपराष्ट्रपति का निर्वाचन संसद के दोनों सदनों के सदस्य मिलकर आनुपातिक प्रतिनिधित्व –पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा करेंगे और

ऐसे निर्वाचन में मतदान गूढ़ शलाका द्वारा होगा। (अनु. 66)। राष्ट्रपति के निर्वाचन में राज्य विधान–मण्डल के सदस्य भी भाग लेते हैं।

उपराष्ट्रपति की अर्हताएँ – उपराष्ट्रपति की अर्हताएँ वही हैं जो राष्ट्रपति की हैं, सिवाय इसके कि उसे राज्यसभा के लिए चुने जाने की अर्हता चाहिये {अनु.66 (3) (ग)}। वह कोई लाभ का पद धारण नहीं कर सकता है। वह संसद के किसी सदन या राज्य के विधान–मण्डल के किसी सदन का सदस्य नहीं हो सकता और यदि ऐसा व्यक्ति उपराष्ट्रपति निर्वाचित हो जाता है तो यह समझा जायेगा कि उसने उस सदन का अपना स्थान अपने पद–ग्रहण की तारीख से रिक्त कर दिया है। राष्ट्रपति अथवा उसके द्वारा नियुक्त किसी व्यक्ति के समक्ष संविधान में विहित रूप में शपथ लेनी पड़ती है। (अनु. 59)।

उपराष्ट्रपति की पदावधि – उपराष्ट्रपति की पदावधि पाँच वर्ष की है। किन्तु इस अवधि के पहले ही– (क) वह अपने पद से राष्ट्रपति को सम्बोधित करके अपना पद त्याग सकता है; (ख) उसे राज्य–सभा के संकल्प द्वारा, जिसे सदन के तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत ने पारित किया हो तथा जिसे लोकसभा के साधारण बहुमत ने स्वीकृत किया हो, अपने पद से हटाया जा सकता हैं किन्तु ऐसे सकंल्प को प्रस्तावित करने के पूर्व 14 दिन की नोटिस देना आवश्यक है (अनु. 67)।

राष्ट्रपति की शक्तियाँ

संविधान द्वारा प्रदत्त राष्ट्रपति की शक्तियों को हम निम्नलिखित भागों में बाँट सकते हैं – (1) कार्यपालिका शक्ति, (2) सैनिक शक्ति, (3) कूटनीतिक शक्ति, (4) विधायिका शक्ति, (5) न्यायायिक शक्ति, (6) आपात्कालीन शक्तियाँ।

1. कार्यपालिका–शक्ति

संविधान में राष्ट्रपति को वृहत् कार्यपालिका–शक्ति प्राप्त है। संघ की कार्यपालिका–शक्ति राष्ट्रपति में निहित है (अनु. 53)। वह भारतीय गणतन्त्र का प्रधान हैं। भारत सरकार की समस्त कार्यपालिका –कार्यवाही राष्ट्रपति के नाम से की जाती है (अनु. 77)।

2. सैनिक शक्ति

राष्ट्रपति देश के प्रतिरक्षा बलों का सर्वोच्च सेनापति है। उसे युद्ध घोषित करने तथा शान्ति स्थापित करने की शक्ति प्राप्त है। किन्तु इस शक्ति प्राप्त हैं। किन्तु इस शक्ति के प्रयोग को संसद विधि द्वारा विनियमित करती है। इस प्रकार राष्ट्रपति की सैनिक–शक्ति उसकी **कार्यपालिका–** शक्ति के अधीन है। जिसका प्रयोग वह मन्त्रि –परिषद् की मन्त्रणा से करता है।

3. कूटनीतिक शक्ति

राष्ट्राध्यक्ष होने के नाते राष्ट्रपति अन्य देशों के लिए राजदूतों और कूटनीतिक प्रतिनिधियों की नियुक्ति करता है और विदेशी राजदूतों और अन्य प्रतिनिधियों का स्वागत करता है। विदेशों से संधियाँ और अन्तर्राष्ट्रीय समझौते आदि राष्ट्रपति के नाम से किये जाते हैं । किन्तु संधियाँ या समझौते संसद के अनुसमर्थन के उपरान्त ही आबद्धकर होते हैं।

4. विधायी शक्ति

राष्ट्रपति केन्द्रीय विधान मण्डल का एक आवश्यक अंग है। सिद्धान्ततः उसे वृहत शक्तियाँ प्राप्त हैं, किन्तु व्यवहारत : उन शक्तियों का प्रयोग वह मन्त्रि परिषद् के परामर्श से करता है। राष्ट्रपति संसद् के सत्र को आहूत करता है और सत्रावसान करता है। वह लोक सभा का विघटन कर सकता है

अध्यादेश प्रख्यापित करने की शक्ति (अनु. 123)

राष्ट्रपति की विधायिनी शक्तियों में उसके अध्यादेश जारी करने की शक्ति सबसे महत्वपूर्ण शक्ति है। अनु. 123 में यह उपबन्धित है कि जब संसद के दोनों सदन सत्र में न हो और राष्ट्रपति को इस बात का समाधान हो जाये कि ऐसी परिस्थितियाँ वर्तमान हैं जिनमें तुरन्त कार्यवाही करना आवश्यक हो गया है तो ऐसे अध्यादेश प्रख्यापित कर सकेगा तो उसे उक्त परिस्थितियों में अपेक्षित प्रतीत हों।

मुख्य बिन्दु

1. 26 नवम्बर 1949 को कुल 248 सदस्य उपस्थित थे, जिन्होने संविधान पर हस्ताक्षर किये।
2. प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ अम्बेडकर थे।
3. वर्तमान संविधान में कुल 345 अनुच्छेद तथा 12 अनुसूचियाँ है।
4. गणराज्य का तात्पर्य है, भारत का राष्ट्राध्यक्ष निर्वाचित होगा।
5. समाजवाद का तात्पर्य है, गरीब व अमीर के मध्य दूरी कम किया जाना,
6. भारत राज्यों का संघ होगा।
7. अपशिष्ट शक्तियाँ केन्द्र के पास है।
8. मूल कर्तव्य अब 11 हो गए है।
9. भारत का राष्ट्रपति प्रथम नागरिक कहलाता है।
10. राष्ट्रपति का निर्वाचन एकल संक्रमणीय मत प्रणाली द्वारा होता है।
11. राष्ट्रपति संवैधानिक प्रधान होता है।, कार्यपालिका का वास्तविक प्रधान नहीं।

VPMCLASSES